वेदों में पर्यावरण संरक्षण

Suman Singh

Hindi Department, Dayanand Girls College, Kanpur, U.P.

Abstract

Vedas are a great source of valuable literature of different kinds, which led to development of a vast pool of religious and scientific literature like Samhita, Brahmin, Aranyak, Upanishad etc.. It can be said that environmental protection is not a new concept to be discussed in present era in India. The stalwarts of philosophy and culture thought deeply about the environment and thereby established an unbroken link between the environmental quality and the religious sentiments, which later became an integral part of the Indian society and culture. There is a very deep-root relationship between the human beings and the environment in India.

As a matter of fact, human body itself has been visualized as being made up of five natural elements, i.e., earth, water, air, fire and sky. One cannot imagine about existence of life in absence of even anyone of these. They have been prayed in the Vedas only to pay our heartiest gratitude to them. They have been treated as deities and linked to the religious sentiments so that they remain as indispensable parts of the faith and coming generations pay attention towards the preservation of their quality with careful efforts because even the survival of the human race may be in danger without their existence in proper quality. If human beings preserve quality of the natural environment, it will not hesitate in showering its treasures on the human-race. Without mentioning the word 'environment', it has been described in the Vedas that the nature is life-giver and supporter.

It is difficult to imagine even the mere existence of life on this beautiful and unique planet without existence of the nature in its appropriate quality. How to save this planet from destruction from evil acts of human society. This stands as a great question before the human race at present. One can find the solution of this question in our Vedas. It is quite difficult to find such examples related to preservation of environment in ancient (contemporary to the Vedic time) literature of the world other than the Vedic one.

वेद भारतीय संस्कृति की मूलभूत आत्मा है। भारतीय संस्कृति के देदीप्यमान स्वरूप में अपनी प्रखर आभा से सबको चमत्कृत कर देने वाले श्रेष्ठ कोहिनूर चार वेदों के रूप में अनन्तकाल से जगमगा रहे हैं। मन्त्रद्रष्टा ऋषियों की यह वाणी हमारे आध्यात्मिक जीवन की प्रेरणा स्रोत है। जिनमें ज्ञान, विज्ञान, धर्म, आध्यात्म एवं पर्यावरण संरक्षण का विशाल सागर विद्यमान है। जहाँ निमज्जन कर मानव को वही शीतलता प्राप्त होती है, जिससे उसके समस्त तापों का शमन हो जाता है। 'वेद' शब्द से सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय का बोध होता है और उससे संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, एपहनषद सभी जाने जाते हैं। भारतीय जीवन का कोई ऐसा भाग नहीं, जहाँ वेदों का प्रामाण्य न प्राप्त होता हो। वेद हमारे जीवन की वह आधारशिला है, जो हमारे स्वार्थ, लोभ, घृणा आदि का उन्मूलन कर प्रेम, सेवा, कर्तव्य निष्ठा समर्पण एवं उत्सर्ग का भाव सिखाता है।

आज पूरे विश्व में पर्यावरण एक गम्भीर चर्चा का विषय बना हुआ है। पर्यावरण पर चर्चा-परिचर्चा भारत के संदर्भ में कोई नया विषय नहीं है। हमारे धर्म-दर्शन एवं संस्कृति के पुरोधाओं लिए पर्यावरण में कोई नया विषय नहीं है। हमारे धर्म-दर्शन एवं संस्कृति के पुरोधाओं ने सर्वप्रथम पर्यावरण के विषय में ही सोचा और पर्यावरण सुरक्षा को धार्मिक-भावना से जोड़कर उसे सांस्कृतिक परम्परा का अभिन्न अंग बना दिया। मानव एवं पर्यावरण का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति मनुष्य को प्रकृति से ही प्राप्त होती हैं। वायु, वर्षा, जल, भूमि, वनस्पति, पेड़-पौधे, पशु वन्य जीव, सूर्य की रोशनी, पर्वत-पहाड़, नदी-तालाब, कीटाणु आदि सभी मिलकर पर्यावरण की संरचना करते हैं। संतुलित पर्यावरण का ताना-बाना ही पृथ्वी पर जीवन-प्रक्रिया ठीक से चलाने में मदद करता है। हमारे ऋषि मुनियों ने सदैव प्रकृति की आराधना, अर्चना एवं प्रार्थना कर

Vijnana Bharati

पारिस्थितिकी संतुलन को कायम रखा। उन्होंने पर्यावरण के शुद्धिकरण के लिए शांति स्रोतों का स्तवन किया - "ओउम् द्यौ शान्ति अंतरिक्षं शांति, पृथिवी शांतिराप: शांति ओषधय: शांति वनस्पतय: शांति विश्वेदेवा शांति ब्रह्म शांति सर्वं, शांति शांति रेव शांति सामा शांतिरेधि।" जिन पंच भौतिक तत्वों से यह मानव शरीर निर्मित है, उनमें एक के अभाव में भी जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। ये पंचभूत हैं- भूमि, वायु, अग्नि, जल और आकाश। इन सबके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए वेदों में इनकी स्तुति की गई है तथा उन्हें देवता मानकर धार्मिक भावना से जोड़ा गया है ताकि वे लोक-आस्था का विषय बने रहें। परन्तु दुर्भाग्य है कि आज हम इन पंचभूत को नमन करने के बजाय प्रदूषित कर रहे हैं। फिर भला हमारा अस्तित्व खतरे में क्यों नहीं होगा? वेद साक्षी है कि हमने सदैव प्राकृतिक संसाधनों की पूजा की है। वेदों में कहा गया है कि-

यो देवोद्रग्नौ, योदुप्सु यो विश्व भवनमाविवेश,

यो ओषधिक्ष यो वनस्पतिषु तस्मै देवाय नमोनम:।।[१]

अर्थात जो अग्नि, जल, आकाश, पृथ्वी एवं वायु से आच्छादित है तथा जो औषधियों एवं वनस्पति में भी विद्यमान है, उस (पर्यावरण) देव को हम नमस्कार करते हैं।

"माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या" वेदों में धरती को 'माँ' कहा गया है धरती माता हमें अपनी गोद में खिलाती हैं तथा हमारे पाद-प्रहारों का आघात सहन करती है इन सबके प्रति हम कृतघ्न कैसे हो सकते हैं इसी लिए अथर्ववेद में कहा गया है "जिस धरती पर वृक्ष, वनस्पति एवं औषधियाँ" हैं, जहाँ स्थिर और चंचल (स्थावर और जंगम) सबका निवास है, उस विश्वंभरा धरती (मातृभूमि) के प्रति हम कृतज्ञ हैं, हम उसकी स्वतंत्रता की प्राणपण से रक्षा करेंगे।[२] ऋग्वेद में पृथ्वी को माता स्वरूप मानकर उसकी स्तुति करते हुए कहा गया है कि "हे पृथ्वी माता! हमें सोत्साह उत्तम मार्ग की ओर ले चल। तू हमें पीड़ा न दे। हमारे लिए सुखदायी बन। हे सर्वोत्पादिके! जैसे माता पुत्र को अपने आँचल से ढंकती है, वैसे ही तू भी रक्षक बन।"

उच्छ वञ्चस्व पृथिवी मानि बाधथा:

सूपायनास्मै भव सूपवञ्चना।

माता पुत्रं तथा सिंचाभ्येनं भूम उर्णहि।[३]

समस्त मानव प्राणियों के जीवन का आधार यह धरती माता ही है, उसी की गोद में पल-बढ़कर सभी अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। हमें जीवन में जो कुछ भी उपलब्ध होता है, वह सुख पृथ्वी की कृपा से है।

इसा भूया उषसाभिव क्षा यद्ध क्षुमन्त: क्षवसा समायन।

अस्य स्तुति जरितु भिक्षमणा आ न:।।[४]

इन पंक्तियों के भाव आज के परिप्रेक्ष्य में इस प्रकार सम्प्रेषित होता है कि धरती का हम सदियों से दोहन करते आये हैं ताकि मनुष्य का जीवन और स्वास्थ्य सदा बना रहे, परन्तु आज मनुष्य अपने स्वार्थ के कारण स्वयं को खतरे में डाल लिया है। हमें पूर्वकाल के तथ्यों को हृदयंगम करने की पुन: आवश्यकता है, ताकि संतुलित पर्यावरण चेतना का विकास हो सके।

जल का हमारे जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है आज कहा जाता है 'जल ही जीवन है'। जल का हमारे स्वास्थ्य एवं खुशहाली से बहुत गहरा सम्बन्ध है। जीव तथा वनस्पति की मूलभूत आवश्यकताओं के लिए जल अपरिहार्य है। जल व जीवन को एक दूसरे का पर्याय कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। जनसंख्या वृद्धि तथा अन्य कारणों से पीने का पानी धीरे-धीरे कम होता जा रहा है, जिसमें प्रमुख कारण जल प्रदूषण भी है। नदियों के किनारे ही हमारी सभ्यता का विकास हुआ परन्तु आज हम इन नदियों को प्रदूषित करने में पीछे नहीं हैं। जिस गंगा नदी का पानी इतना पवित्र माना जाता था कि लोग बोतलों में भरकर रखते थे। आज वहीं गंगाजल कई स्थानों पर इतना प्रदूषित हो चुका है कि उसे पीना तो दूर उसमें स्नान भी नहीं किया जा सकता। यदि अभी भी जल को प्रदूषित होने से बचाने का प्रयाास नहीं किया गया तो भविष्य में इसके परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। अत: आज हम वेदों का अनुसरण कर जल प्रदूषण जैसी समस्या का समाधान कर पायेंगे। क्योंकि हमारी पुरातन संस्कृति में स्वच्छ पेयजल की प्राप्ति के लिए वैदिक ऋषि प्रार्थना करता है - "शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु"[५] इसीलिए नदियों, तालाबों व पोखरों आदि में मल-मूत्रादि विसर्जन को पाप कर्म समझा जाता है। जल प्रदूषण के प्रति इतनी जागरुकता आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व हमारी संस्कृति में देखने को मिलती है जल की गुणवत्ता का हमारे ऋषियों को पहले से ज्ञान था। सदानीरा नदियाँ इस धरा के वक्षस्थल को निरन्तर सींचती रहती हैं और प्राणिमात्र को पेयजल उपलब्ध कराती हैं, अत: वे भी हमारे लिए वन्दनीय हैं। गंगा-यमुनादि पवित्र नदियों को पापनाशिनी माना गया है। इन नदियों के तटों एवं संगम स्थलों पर पवित्र तीर्थ स्थान है। ऐसा माना जाता है कि सैकड़ों वर्षों तक तपस्या करने से जो फल प्राप्त नहीं होता, वह गंगा स्नान करने

Vijnana Bharati

मात्र से हो जाता है। पतित पावनी गंगा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों की स्तुति की गई है-

"इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शतुद्रि स्तोमे सचतापरुष्णया।
असिकन्या मरुदृधे वितस्तयार्जीकीये शृबुह्मया सुषोमया।।"[६]

वायु हमारे पर्यावरण का अभिन्न अंग है और यह जीवन के लिए अति आवश्यक है। प्राचीन काल में वायु प्रदूषण जैसी समस्या हमारे सामने नहीं थी, लेकिन आज बढ़ रहे औद्योगीकरण व शहरीकरण के फलस्वरूप वायुमंडल में विषैली गैसों, पदार्थों, धूल के कणों आदि की उपस्थिति बढ़ी है। यह मनुष्यों, जानवरों और वनस्पतियों के लिए हानिकारक है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विकास के कारण जहाँ अनेक सुख सुविधायें प्राप्त हुई हैं, वहीं मानव स्वास्थ्य के लिए अनेक जटिलताएं एवं समस्यायें भी पैदा हो गयी हैं।

आज वायु प्रदूषण मानव अस्तित्व के लिए एक बड़ा संकट बना हुआ है। हम बिना अन्न-जल के कुछ समय के लिए जीवित रह सकते हैं, परन्तु प्राण वायु के बिना एक पल भी जीवित नहीं रह सकते। इसलिए वेद में वायु को न केवल देवतुल्य माना गया है बल्कि जीवनदाता, मित्र व पालनकर्त्ता भी माना गया है। वेदों के अनुसार स्वच्छ वायु प्राणदायिनी औषधि के समान है, जिससे हमारा जीवन स्वस्थ एवं निरोग रह सकता है। इसीलिए स्तुतिकर्ता उपासक वायुदेवता से प्रार्थना करता है-

"वात आ वातु भेषजं शम्भु मयोभु नो हृदे।
प्राण आयूषि तारिषत् ।।"[७]

पंचभूत तत्त्वों में एक आकाश भी है। यह आकाश हमारा वायुमण्डल है। इस वायुमण्डल में अनेक गैसें जैसे - आक्सीजन, कार्बन डाई आक्साइड, मीथेन, नाइट्रोजन आदि हैं। पृथ्वी की रक्षा कवच कही जाने वाली ओजोन परत वायुमण्डल के ऊपर ही सूर्य की पराबैगनी किरणों को छलनी की तरह रोक लेती है। इस वायुमण्डल में जीवन प्रदायक तत्त्व हैं जिससे प्रजनन एवं जीवन सम्भव हैं जो कि अन्य ग्रहों के पास नहीं है। आज वायुमण्डलीय प्रदूषण भी अन्य प्रदूषणों की तरह एक समस्या है। पर्यावरण सुरक्षा किसी एक व्यक्ति या क्षेत्र की समस्या नहीं है। इसके लिए सामूहिक प्रयत्नों की आवश्यकता है। हमारे ऋषि मुनियों ने पंचभूतों को हमारी धार्मिक भावना से जोड़कर उनके संरक्षण का मार्ग प्रशस्त किया था। वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान तथा औद्योगिक क्रांति के कारण प्रकृति दोहन की होड़ से पर्यावरण संकट उत्पन्न हुआ है। यदि हम मंगलमय भविष्य साकार करना चाहते हैं तो हमें अपनी प्राचीन संस्कृति की उस सर्वमंगल कामना की ओर पुनः लौटना होगा, जिसमें कहा गया है-

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग भवेत् ।।"

सभी सुखी और स्वस्थ तभी रह सकते हैं, जबकि हमारा पर्यावरण स्वच्छ एवं स्वास्थ्यवर्धक हो।

पर्यावरण संरक्षण में अग्नि का महत्व सर्वाधिक है। अग्नि समस्त प्राणियों की रक्षा वैसे करता है, जैसे पिता पुत्र की - "पावको अस्मभ्यम् शिवो भव"।[८]

पर्यावरण शुद्धता में अग्नि का योगदान सबसे अधिक है। इसीलिए ऋषि उसे पावक या पावमान कहते हैं। अग्नि की इन्हीं विशेषताओं के कारण वेदों में उनसे पर्यावरण की पूर्ण शुद्धि की कामना की गई है-

"यत्रे पवित्रामर्चिष्यग्ने विततमन्तरा।
ब्रह्म तेन पुनातु मा।।"[९]

अर्थात् हे अग्नि तुम्हारे ज्वालाओं के मध्य में पवित्र ब्रह्म उदित हुआ है, उससे मुझे पवित्र करो। अग्नि का प्रज्वलन समिधाओं से होता है। समिधा के रूप में वेदों में अनेक वृक्ष की लकड़ियाँ प्रयोग में लाने की बात कही गयी है। जिससे वातावरण शुद्ध होता है। उन वृक्षों में आम, बिल्ब, वट पलाश आदि हैं। औषधियुक्त सर्वोत्तम समिधा तो गाय के गोबर का उपला है जिसमें अमोनिया, नाईट्रोजन व पोटाश जैसे अन्य तत्व पाये जाते हैं, यहीं नहीं गाय का गोबर विकिरण का रोधक भी माना जाता है।

वेदों में न केवल इन पंच-तत्वों की, अपितु उनके अन्तर्गत आने वाले उन अन्य उपादानों की भी स्तुति की गई है, जो किसी न किसी रूप में जीवनोपयोगी है, जैसे वृक्ष, वनस्पति, वनोषधि, सूर्य, चन्द्रमा आदि। इसके पीछे दो कारण थे, एक तो वैदिक आर्य प्रकृति के अनन्य प्रेमी थे, दूसरा अपने चारों ओर का पर्यावरण स्वच्छ, साफ-सुथरा, संतुलित एवं मनभावन बना रहे, उसके साथ कोई अनावश्यक छेड़छाड़ न करे, इस कारण उन्हें निर्जीव होते हुए भी धार्मिक आस्था से जोड़ा गया ताकि भावी पीढ़ी उनके संरक्षण एवं संवर्द्धन के प्रति विशेष ध्यान दे, उन्हें आदर भाव की दृष्टि से देखें क्योंकि उनके बिना मानव-जीवन का अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है। "हमारी पुरातन संस्कृति में प्रकृति-प्रेम एवं प्रकृति-संरक्षण की भावना इस तरह घुली-मिली है कि उसे

Vijnana Bharati

एक-दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता।"[१०] तात्पर्य यह है कि हमारे जीवन के अभिन्न अंग इन प्राकृतिक पदार्थों को जितना ऊँचा स्थान हमारी संस्कृति में प्राप्त है उतना शायद ही किसी और देश की धर्म संस्कृति में प्राप्त हो।"

पर्यावरण सन्तुलन बनाये रखने में पेड़-पौधों की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जाती है, परन्तु जनसंख्या वृद्धि ने विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पेड़ों की द्रुतगति से कटाई को बढ़ावा दिया है। प्रकाश संश्लेषण विधि से पेड़-पौधे कार्बन डाई आक्साइड से ग्लूकोज बनाते हैं, विषाक्त गैसों को सोख लेते हैं। इस प्रकार वायुमण्डल को प्रदूषण रहित बनाते हैं। हमारे ऋषि मुनियों ने वृक्षों के नीचे रहकर आत्मबोध प्राप्त किया था। प्रकृति के साथ मैत्री ही नहीं अपितु प्रकृति को सदा नमन करने की हमारी मान्यता रही है। वैदिक काल से ही वनों, वनस्पतियों व वन्य जीवों का महत्व पहचाना गया और उन्हें जीवन में समुचित स्थान दिया गया। वनों एवं वृक्षों का हमारे जीवन से इतना गहरा सम्बन्ध है कि उन्हें 'वन देवता' कहकर पुकारा गया और उनके बारे में अनेक गुणगान भरी प्रशस्तियाँ लिखी गयीं। वर्तमान युग में मनुष्य अपनी स्वार्थ लिप्सा के कारण जिस तरह वनों का विनाश कर रहा है, इसकी आशंका शायद वैदिक ऋषि को भी थी, जिस कारण वे वृक्षों के महत्व को प्रतिपादित करते हुए बतलाते हैं कि इस पृथ्वी पर वृक्ष तो सभी प्राणियों को जीवन एवं आनन्द प्रदान करने वाले हैं-

"वयो न वृक्षं सुपलाशमासदन्सोमास इन्द्र मन्दिनश्चमूषद।
प्रषामनीकं शक्या दविद्यद्विदव्स्वशर्मनंवे ज्योतिरार्यम।।"[११]

यहीं नहीं हमारे धर्म ग्रन्थों में यहाँ तक कहा गया है कि - "एक वृक्ष का रोपण व पालन समाज को योग्य पुत्र देने के समान है तथा एक बाग लगाना एक न्यायी राजा बनने वाले पुत्र को जन्म देने के समान है।" यह सब इसलिए कहा गया है, क्योंकि वृक्षों से हमें आक्सीजन, भोजन, जलवायु, भू-क्षरण को रोकने की क्षमता और लकड़ी प्राप्त होती है। वृक्ष लगाना न केवल आर्थिक दृष्टि से वरन् पर्यावरण की शुद्धि की दृष्टि से भी आवश्यक है।

सूर्य की रोशनी मनुष्य, मनुष्येत्तर प्राणियों एवं वनस्पतियों के लिए कितनी उपयोगी हैं, हमारे वैदिक ऋषियों को इसका पूरा ज्ञान था। कल्याणदात्री सूर्य की रश्मियों से पृथ्वी में अन्न एवं पौष्टिक शक्ति उपजती है। गौ, अश्व इत्यादि प्राणियों में भी उनसे उपयोगी बल एवं कर्मशक्ति का सृजन होता है। औषधियों व फलों को भी इन्हीं से शक्ति मिलती है। रोग निवारण आदि कर्मों में भी ये प्रभावी ढंग से उपयोगी सिद्ध होती हैं-

"ब्रह्मगामश्वं जनयन्त ओषधीर्वनस्पतोन्पृथिवीं पर्वतां अप:।
सूर्य दिवि रोहयन्त: सुदानव आर्याव्रता विसृजन्तो अधिक्षमि।।"[१२]

सूर्य अपरिमित ऊर्जा का स्रोत है। उसके बिना इस धरती पर मानव जीवन व अन्य जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। इसीलिए वैदिक ऋषि सूर्य को देवता मानते हैं- 'सूर्य देवो भव'। इस धरती पर अन्न, वनस्पति तथा जैविक प्रक्रिया तभी संभव हो सकती है, जब वर्षा हों इसीलिए भूमि उपलब्धियों की कामना के लिए वर्षा हेतु इन्द्र की स्तुति की गई है।

"आतत्त इन्द्रायव: पनन्ताभि या उर्व गोमन्तं तितृत्यान।
सकृत्स्वं! ये पुरुपुत्रां महीं सहस्त्रधारां वृहतीं दुदुक्षन् ।[१३]

वेदों में सामाजिक जीवन व उनकी उन्नति का पर्याप्त वर्णन है। वैदिक सूक्तों के अनेक मन्त्रों में चाहे वह विष्णु सूक्त का मन्त्र हो या पूषा सूक्त का मन्त्र हो यदि हम उनमें निहित भाव को अपने ज्ञान चक्षुओं से देखने का प्रयास करते हैं तो यह पाते हैं कि एक स्वस्थ सामाजिक जीवन के उत्कर्ष का प्रामाण्य वैदिक मन्त्रों में सन्निहित है। वैदिक धर्म यज्ञों का धर्म है। भारतीय संस्कृति यज्ञपरक संस्कृति रही है यज्ञों से रोगकृमी तो नष्ट होते ही है, साथ ही वायुमण्डल भी पवित्र होता है। वैदिक ऋषि शुद्ध वायु के महत्व को जानते थे जो हमारे लिए आरोग्यवर्धक तथा प्राणशक्ति को बल व ऊर्जा सम्पन्न बनाने वाला होता है। इसीलिए यजुर्वेद में कहा गया है कि "यज्ञ शारीरिक स्वास्थ्य मानसिक शान्ति, भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही प्रकार की समृद्धियाँ प्रदान करने में सहायक है। यज्ञ तो हजारों प्रकार की पुष्टि प्रदान करता है - साहस्त्र: पोषस्तयु यज्ञमाहु:।"[१४]

वेद एवं यज्ञ का सम्बन्ध शरीर एवं प्राण की भाँति है। वेद शरीर है तो यज्ञ उसका प्राण है तथा ब्रह्म ही इस वेदरूपी शरीर में रहने वाला आत्म तत्व है, जिसके आधार पर वेद एवं यज्ञ दोनों ही प्रतिष्ठित हैं। यज्ञ करते समय जब आहुति को अग्नि में समर्पित करके "इदन्न मम" का पाठ करते हैं तब यह आहुति न केवल चेतन प्राणियों के लिए, अपितु जड़ जगत के लिए भी समान रूप में लाभकारी हो यही भाव यज्ञकर्ता की होती है। इसीलिए वह जल के लिए भी आहुति देता है और सूर्य के लिए भी देता है-

हविष्मतीरिमाऽआपो हविष्मॉ अविवासति।

Vijnana Bharati

हविष्मान्देवाऽमध्वरो हविष्मांऽअस्तु सूर्यः।।[१५]

यज्ञकुण्ड में आहुति देने का यही अभिप्राय है कि वह आहुति यहाँ से उठकर सम्पूर्ण वायुमण्डल में फैल जाये और उसे सुगन्धित तथा रोग रहित कर दे। यही आहूति दूषित जलों में प्रवेश करके उन्हें शुद्ध करती हुई अन्त में सूर्य को प्राप्त हो जाये।

यज्ञ व्यक्ति, समाज, राष्ट्र एवं विश्व की सर्वाधिक उन्नति का साधन है। आध्यात्मिक, आधिभौतिक आदि सभी उन्नतियाँ इससे प्राप्त होती हैं। इसी अभिप्राय से अथर्ववेद में यज्ञ को विश्वतोधार कहा गया है। अर्थात् इसकी धाराएं सबके लिए सब ओर जाती है।

"यज्ञं वै विश्वतोधारं सुविवांसो वितेनिरे।"[१६]

इस प्रकार यज्ञ से पर्यावरण की शुद्धि होती है। पर्यावरण संरक्षण के लिए यज्ञ की उपयोगिता यह कहकर बतायी गयी है कि इससे एक ओर जहाँ कीटाणु नष्ट होते हैं वहीं दूसरी तरफ परस्पर सहयोग का वातावरण बनता है। यज्ञ का लक्ष्य केवल भौतिक वातावरण की शुद्धि न होकर व्यापक स्तर पर मनुष्य स्वभाव की शुद्धि भी है। अतः वेदों के आधार पर यज्ञ के स्वरूप को समझकर उसके द्वारा पर्यावरण संरक्षण का कार्य करना उचित होगा। अगर वायु और जल शुद्ध हो तो, सम्पूर्ण मानव जाति सुख स्वास्थ्य और दीर्घायु प्राप्त कर सकती है,क्योंकि मंत्रों के अर्थों पर विचार करने से मानसिक प्रदूषण समाप्त होता है तो मंत्रों के उच्चारण से ध्वनि प्रदूषण समाप्त होता है। अग्नि में डाली गयी आहुतियाँ वायु एवं जल को शुद्ध करती हैं।

प्राचीन काल में यज्ञ से वातावरण शुद्ध था। परन्तु वर्तमान समय में वेदों के ज्ञानाभाव के कारण कर्त्तव्यों की क्षीणता, अधिकारों की मांग व अनुशासनहीनता बढ़ रही है। मनुष्य मल-मूत्र विसर्जन तथा अनेकों क्रिया-कलापों द्वारा जैवमण्डल को दूषित करता जा रहा है। इसलिए यह उसका नैतिक दायित्व बनता है कि वह प्रायः यज्ञ कर प्रदूषण दूर करता रहे। परन्तु यज्ञ न करने से पर्यावरण प्रदूषित होता जा रहा है। सभी लोग अस्वस्थ हैं और अनेक बीमारियों से ग्रसित हैं। यदि इन सभी समस्याओं से स्वयं की रक्षा करनी है तो हमें पुनः वेदों का अनुकरण करना होगा।'

भारतीय संस्कृति के बीज-मंत्र शुद्धि की भावना लिए हुए हैं। मनुष्य इस सृष्टि की श्रेष्ठतम कृति है। वह यदि प्रकृति का पोषण करे तो प्रकृति भी अपने खजाने को दोनों हाथों से लुटाने में संकोच नहीं करेगी। प्रकृति के नाना पदार्थों को हम आदर भाव दें और उन्हें जीवन का अंग मानकर नष्ट न होने दें तो वे हमारे लिए वरदान सिद्ध होंगे। इसीलिए वेदों में कहा गया है "प्रकृति के शाश्वत नियमों का आदर करो, वे बड़ी मधुरता से जीवन में सहायक होते हैं-

"ऋतेन ऋतं नियतमील आ गोरामा सचा मधुमत्पक्वमग्ने।
कृष्णा सती रुशता धासिनैषा जामर्येण पयसा पीपाय।।"[१७]

पर्यावरण के सभी अंग-उपांग हमारे लिए उपादेय हैं। उनमें से किसी एक के अभाव में भी हमारा जीवन चक्र चल नहीं सकता। अतः सभी देवता व विद्वत्जन से भी ऋषिगण प्रार्थना करते हैं कि वे इस धरा के मानव प्राणी को अभयदान दें-

"समुद्रः सिन्धू रजो अन्तरिक्षमत एक पात्रनयिन्नुरर्णवः।
अहिर्बुध्नयः शृणवद्वचांसि मे विश्वे देवास उत सूरयो मम।।"[१८]

अर्थात् सागर, महानदी, पृथ्वी, आकाश, सूर्य, विद्युत्, जलाशय एवं आकाश स्थित मेघ सभी हमें बढ़ाये तथा सकल विद्वतजन भी हमारी प्रार्थनाओं को सुनें।

पर्यावरण विषयक चिंतन भारत के परिप्रेक्ष्य में कोई नया नहीं है। यह हमारी धार्मिक एवं सांस्कृतिक परम्परा से जुड़ा हुआ है। प्राचीनकालीन पर्यावरण भारतीय दृष्टि को कवि टैगोर अपने शब्दों में प्रकट करते हैं "वन और प्राकृतिक जीवन मानव जीवन को एक निश्चित दिशा देते हैं। मानव प्राकृतिक जीवन की वृद्धि के साथ सम्पर्क में था। वह अपनी चेतना का विकास आसपास की भूमि से करता था। उसने विश्व को आत्मा तथा मानव को आत्मा के बीच के सम्बन्ध को महसूस किया। मानव और प्रकृति के बीच के इस तारतम्य ने पर्यावरण को आत्मसमर्पित करने के शांतिपूर्ण एवं बेहतर तरीकों को जन्म दिया है।"[१९]

इस प्रकार हमारी सभ्यता एवं संस्कृति के आदि ग्रंथ वेद में जीवन की पूर्णता एवं सुखी-स्वस्थ जीवन के लिए उपयोगी समस्त प्राकृतिक पदार्थों को जीवन के अभिन्न अंग के रूप में निरूपित करते हुए, उनकी मानवीय संदर्भों में उपादेयता प्रतिपादित की गयी है। 'पर्यावरण' शब्द का उल्लेख किए बिना, यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि प्राकृतिक पदार्थ हमारे वास्तविक मित्र व जीवनदाता है। उनके अस्तित्व के बिना, धरती पर मानव के अस्तित्व की भी कल्पना नहीं की जा सकती। विश्व का प्रत्येक देश आज किसी न किसी प्रकार के पर्यावरण संकट से गुजर रहा है। वैज्ञानिक प्रगति एवं औद्योगिक विकास के फलस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों का जिस अनियंत्रित ढंग से शोषण हुआ है और प्रकृति

Vijnana Bharati

के संचित कोष को लूटने की जबरदस्त होड़ मची है, उसके कारण पर्यावरण संतुलन सम्बन्धी अनेक समस्यायें उठ खड़ी हुई हैं। हम अपने स्वर्ग स्वरूपा धरती को नरक मय बनाने से कैसे बचायें, इस समस्या का जैसा समाधान वेद में है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। पर्यावरण संरक्षण की इससे बढ़कर उदात्त कल्पना वेदों के अतिरिक्त विश्व के किसी भी साहित्य में देखने को नहीं मिलती। वैदिक ज्ञान से दूरी के कारण व्यक्ति, समाज, देश व मानवता के समाने तमाम समस्याएं खड़ी हुयी है। अतः वैदिक ज्ञान को अपनाकर ही सभी समस्याओं से छुटकारा पाया जा सकता है।

सन्दर्भ :

१. आधुनिक जीवन और पर्यावरण - दामोदर शर्मा, पृ० १३३

२. अथर्ववेद - १२/१/३१

३. ऋग्वेद - १०/१८/११

४. ऋग्वेद - १०/३५/२

५. अथर्ववेद - १२/१/३०

६. ऋग्वेद - १०/७५/६

७. ऋग्वेद - १०/१८६/१

८. यजुर्वेद - १७/७

९. यजुर्वेद - १९/४१

१०. मध्य हिमालयी समाज, संस्कृति एवं पर्यावरण-डॉ० शेर सिंह विष्ट, पृ० १७१

११. ऋग्वेद - १०/४३/४

१२. ऋग्वेद - १०/६६/११

१३. ऋग्वेद - १०/७४/४

१४. यजुर्वेद - ९/४/१७

१५. यजुर्वेद - ६/२३

१६. अथर्ववेद - २४/४

१७. ऋग्वेद - १०/१८/११

१८. मध्य हिमालयी समाज, संस्कृति एवं पर्यावरण-डॉ० शेर सिंह विष्ट, पृ० १८५

१९. आधुनिक जीवन और पर्यावरण - दामोदर शर्मा, पृ० २८३

Vijnana Bharati